Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal

(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)

(Multidisciplinary, Monthly, Multilanguage)

*** Vol-3* *Issue-4* *April 2026***

www.researchvidyapith.com **ISSN (Online): 3048-7331**

दार्शनिक चिंतन, शास्त्रीय विरासत और मनोविज्ञान का समग्र दृष्टिकोण राष्ट्रीयः शिक्षा नीति 2020

डॉ. सीमा शर्मा

सह आचार्य (हिंदी) एवं अध्यक्ष भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

Article Info: *(Recieved- 02/02/2026, Accept- 20/03/2026, Published- 02/04/2026)*

DOI- 10.70650/rvimj.2026v3i4002

सारांश–

शिक्षा मानव जीवन का ऐसा सशक्त माध्यम है जो न केवल ज्ञान के प्रसार का कार्य करती है, बल्कि व्यक्ति के समग्र विकास, मूल्यबोध और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को भी पोषित करती है। शिक्षा के दार्शनिक, शास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक आधारों का अध्ययन इस दिशा में आवश्यक है, क्योंकि यही वे तीन स्तंभ हैं जिन पर किसी भी शिक्षण व्यवस्था की वैचारिक संरचना टिकी होती है। दार्शनिक दृष्टि शिक्षा को उसके उद्देश्यों, मूल्यों और आदर्शों से जोड़ती है शास्त्रीय दृष्टि भारतीय परंपरा, वेद–उपनिषद, गीता और गुरुकुल पद्धति के माध्यम से शिक्षा को सांस्कृतिक गहराई प्रदान करती है जबकि मनोवैज्ञानिक दृष्टि शिक्षार्थी के व्यक्तित्व, अभिरुचि, प्रेरणा और अधिगम प्रक्रिया को समझने में सहायक होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इन तीनों आयामों का एकीकृत रूप में समावेश करते हुए मूल्यपरक, व्यवहारपरक और अनुभवपरक शिक्षा की अवधारणा प्रस्तुत की है। इस नीति में निहित समग्र विकास (Holistic Development), बहुविषयक दृष्टिकोण (Multidisciplinary Approach) और आजीवन अधिगम (Lifelong Learning) के सिद्धांत शिक्षा को न केवल आधुनिक वैश्विक संदर्भ में, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक परंपरा में भी पुनर्स्थापित करते हैं। इस शोध–पत्र का उद्देश्य इन आधारों के परस्पर संबंधों की विवेचना करते हुए यह प्रतिपादित करना है कि सशक्त और मानवीय समाज के निर्माण हेतु शिक्षा के दार्शनिक, शास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक एकत्व को समझना और व्यवहार में लाना अत्यंत आवश्यक है। यह शोधपत्र वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रविधि पर आधारित है। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक पक्षों का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। प्राथमिक स्रोत के रूप में नीति–दस्तावेज़ तथा द्वितीयक स्रोत के रूप में संबंधित ग्रंथ, शोध–पत्र और जर्नल प्रयुक्त हुए हैं। अध्ययन में भारतीय ज्ञानपरंपरा, मूल्य शिक्षा, आत्मविकास और शिक्षार्थी–केंद्रित दृष्टिकोण को आधार बनाकर यह प्रतिपादित किया गया है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय परंपरा और आधुनिक मनोविज्ञान का संतुलित समन्वय प्रस्तुत करती है।

बीज शब्द– दार्शनिक चिंतन, शास्त्रीय भारतीय ज्ञान, मनोविज्ञान, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, समग्र शिक्षा दृष्टिकोण, शिक्षा और संस्कृति, शैक्षिक नीतियाँ, लोककल्याण और शिक्षा, बहुभाषिक शिक्षा, नैतिक और मूल्य शिक्षा।

भूमिका

शिक्षा मानव सभ्यता के विकास की वह सतत प्रक्रिया है जो व्यक्ति को आत्मबोध से समाजबोध की दिशा में अग्रसर करती है। यह केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि जीवन को नैतिक, सृजनात्मक और मानवीय मूल्यों से संपृक्त करने वाली संस्कार प्रणाली है।[1] महात्मा गांधी ने कहा था कि शिक्षा का उद्देश्य जीवन को सार्थक दिशा देना है, जिससे व्यक्ति अपने विचारों, कर्म और व्यवहार में संतुलन स्थापित कर सके। उनके अनुसार, "सच्ची शिक्षा वह है जो बालक के मन, शरीर और आत्मा के सभी पहलुओं का विकास करे।"[2] इस दृष्टि से शिक्षा एक संस्थागत प्रक्रिया नहीं, बल्कि दार्शनिक चिंतन, सांस्कृतिक परंपरा और मनोवैज्ञानिक विकास का एक समन्वित

तंत्र है।

आधुनिक युग में शिक्षा के समक्ष यह चुनौती है कि वह तकनीकी प्रगति और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के साथ–साथ मानवीय मूल्यों, करुणा और सांस्कृतिक पहचान को भी बनाए रखे।[3] यही कारण है कि शिक्षा के तीन प्रमुख आधार दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने वे प्राचीन भारतीय परंपरा में थे।

दार्शनिक दृष्टि से शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करना नहीं, बल्कि आत्मा के विकास और चरित्र निर्माण की दिशा में अग्रसर होना है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार, "शिक्षा का लक्ष्य केवल ज्ञान का संचय नहीं, बल्कि व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास है।"[4] दर्शन शिक्षा को दिशा, उद्देश्य और आदर्श प्रदान करता है। यह यह निर्धारित करता है कि शिक्षा का अंतिम उद्देश्य क्या होना चाहिए? केवल रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण या नैतिक, बौद्धिक और भावनात्मक विकास। भारतीय दार्शनिक परंपरा में ज्ञान को आत्मा की मुक्ति का साधन माना गया है। शिक्षा का आदर्श "सा विद्या या विमुक्तये" (कठोपनिषद् 1/2/15) इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि सच्ची विद्या वही है जो व्यक्ति को अज्ञान, अहंकार और स्वार्थ से मुक्त करे। दार्शनिक शिक्षा व्यक्ति में विवेक, सहानुभूति, करुणा और आत्मबोध को विकसित करती है। यह शिक्षा को केवल भौतिक सफलता तक सीमित न रखकर, उसे आत्मविकास और समाज कल्याण का माध्यम बनाती है। आधुनिक शिक्षा में जब प्रतिस्पर्धा, यांत्रिकता और उपभोक्तावाद का वर्चस्व बढ़ रहा है, तब दर्शन शिक्षा को मानवीय गरिमा और नैतिक दिशा प्रदान करने का कार्य करता है।

भारतीय शिक्षा की जड़ें गहरी शास्त्रीय परंपरा में निहित हैं। वेद, आरण्यक ग्रंथ, उपनिषद, भगवद्गीता, धर्मपद और नीतिशास्त्र में शिक्षा को जीवन का अभिन्न अंग माना गया है। वैदिक कालीन शिक्षा प्रणाली में गुरु–शिष्य संबंध, चरित्र निर्माण और समग्र व्यक्तित्व विकास पर बल दिया गया। गुरुकुल व्यवस्था में शिक्षा केवल बौद्धिक प्रशिक्षण नहीं थी, बल्कि आत्म–अनुशासन, सेवा, साधना और ज्ञान की साधना के माध्यम से व्यक्ति के सर्वांगीण निर्माण की प्रक्रिया थी।[5]

भगवद्गीता (4/34) में कहा गया है– "तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया" अर्थात् विनम्र भाव से गुरु के समीप जाकर सेवा, जिज्ञासा और श्रद्धा के माध्यम से परम सत्य का ज्ञान प्राप्त करो। यह शिक्षा के उस आदर्श को व्यक्त करता है जिसमें गुरु–शिष्य संवाद, विनम्रता और आत्मानुशासन प्रमुख हैं। इसी शास्त्रीय दृष्टि से भारतीय शिक्षा में न केवल ज्ञान, बल्कि आचार और व्यवहार की शुद्धता को महत्व दिया गया है।

शास्त्रीय शिक्षा व्यक्ति को 'वसुधैव कुटुंबकम्' (महोपनिषद् 1.74) और "आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः' (ऋग्वेद 1.89.1) अर्थातरू हमारे पास चारों दिशाओं से शुभ और कल्याणकारी विचार आते रहें। की भावना से जोड़ती है। वह राष्ट्र, संस्कृति और मानवता के एकीकरण का माध्यम बनती है। आज की शिक्षा प्रणाली में यदि इस शास्त्रीय दृष्टि को पुनः अपनाया जाये, तो यह न केवल मूल्य–संवर्धन कर सकेगी, बल्कि विद्यार्थियों में सांस्कृतिक चेतना और नैतिक दृष्टि भी विकसित करेगी।

शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार यह स्पष्ट करते हैं कि अधिगम की प्रक्रिया कैसे संचालित होती है और विद्यार्थी का विकास किस प्रकार क्रमिक रूप से होता है। लेव वाइगोत्स्की के सामाजिक रचनावाद सिद्धांत के अनुसार, "अधिगम सामाजिक संपर्क के माध्यम से होता है और फिर व्यक्तिगत स्तर पर आंतरिकीकृत होता है।"[6] इसका तात्पर्य है कि शिक्षा केवल व्यक्तिगत गतिविधि नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद का परिणाम है। इसी प्रकार जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत में कहा गया है कि शिक्षा को बालक की जिज्ञासा, अनुभव और बौद्धिक विकास के अनुरूप होना चाहिए।[7] मनोवैज्ञानिक दृष्टि से शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी की क्षमता, रुचि और प्रेरणा के अनुसार अधिगम को व्यक्तिगत और सार्थक बनाना है। आधुनिक शिक्षण पद्धतियाँ जैसे सक्रिय अधिगम (Active Learning), सहयोगात्मक अधिगम (Collaborative Learning) और अनुभवात्मक अधिगम (Experiential Learning) इसी दृष्टिकोण को आगे बढ़ाती हैं। शिक्षक का कार्य केवल ज्ञान देना नहीं, बल्कि शिक्षार्थी के भीतर छिपी संभावनाओं को पहचानना और उन्हें सशक्त बनाना है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा को इन तीनों दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक आधारों पर पुनः स्थापित करने का प्रयास किया है। इस नीति में कहा गया है कि "प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार भी समृद्ध परंपरा की आलोक में यह नीत तैयार की गई है। ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय विचार परंपरा और दर्शन में सदा सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना जाता था।"[8] राष्ट्रीय शिक्षा नीति, शिक्षा को केवल परीक्षा और रोजगार प्राप्ति का साधन नहीं, बल्कि जीवन मूल्यों, रचनात्मकता और आत्मबोध के विकास से जोड़ती है। दार्शनिक दृष्टि से यह व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार और मानवता की सेवा की दिशा में प्रेरित करती है; शास्त्रीय दृष्टि से यह भारतीय संस्कृति, परंपरा और भाषाई विविधता के संरक्षण का माध्यम बनती है; और मनोवैज्ञानिक

दृष्टि से यह विद्यार्थियों की जिज्ञासा, संवेदनशीलता और समग्र व्यक्तित्व विकास पर बल देती है।

यह 'समग्र शिक्षा' की उस दृष्टि को प्रस्तुत करती है जो भारतीय मूल्यपरंपरा और आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण दोनों को जोड़ती है। नीति में कहा गया है– शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानों का विकास करना है जो तर्कसंगत विचार और कार्य करने में सक्षम हो, जिसमें करुणा और सहानुभूति, साहस और लचीलापन, वैज्ञानिक चिंतन और रचनात्मक कल्पनाशक्ति नैतिक मूल्य और आधार है। इसका उद्देश्य ऐसे उत्पादक लोगों को तैयार करना है जो कि अपने संविधान द्वारा परिकल्पित, समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण में बेहतर तरीके से योगदान करे।[9] स्पष्ट है कि शिक्षा का वास्तविक स्वरूप तभी विकसित हो सकता है जब उसमें दार्शनिक आदर्श, शास्त्रीय परंपरा और मनोवैज्ञानिक दृष्टि का संतुलित समन्वय हो। तकनीकी क्रांति और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के इस युग में शिक्षा को केवल कौशल विकास का साधन न बनाकर, मानवीय मूल्यों, सांस्कृतिक जड़ों और वैज्ञानिक दृष्टि का संवाहक बनना आवश्यक है। शिक्षा के लक्ष्य के विषय में डॉक्टर राधा कृष्णन विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण की बात कहते हैं जैसे लोकतंत्र के लिए प्रशिक्षण करना, आत्मविश्वास के लिए प्रशिक्षण देना, वर्तमान और साथ ही अतीत की समझ विकसित करना, व्यावसायिक और पेशेवर प्रशिक्षण प्रदान करना, ज्ञान के विकास के द्वारा जीवन जीने की सहज क्षमता को जगाना, जीवन मूल्यों को विकसित करना जैसे– मन की निडरता, विवेक शक्ति और उद्देश्य की अखंडता। अपनी सांस्कृतिक विरासत के उत्थान के लिए विद्यार्थियों को इनसे परिचित करना भी एक मुख्य लक्ष्य था।[10] यही एकीकृत दृष्टिकोण भावी भारतीय शिक्षा का वास्तविक आधार बन सकता है, जो ज्ञान और मानवता दोनों का संतुलित विकास सुनिश्चित करेगा।

शिक्षा का दार्शनिक आधार

दर्शन और शिक्षा का संबंध मानव सभ्यता के विकास में अत्यंत गहरा और अन्योन्याश्रित है। दर्शन जहाँ जीवन के परम उद्देश्यों, नैतिक मूल्यों और सत्य की खोज का मार्ग प्रशस्त करता है, वहीं शिक्षा उन दार्शनिक सिद्धांतों को व्यवहारिक जीवन में रूपांतरित करने का माध्यम बनती है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि आत्मबोध, मोक्ष और मानव कल्याण की प्राप्ति है। भारतीय दर्शन में शिक्षा को जीवन का साधन नहीं, बल्कि साधना माना गया है। यहाँ शिक्षा व्यक्ति को 'अविद्या से विद्या' और 'असत्य से सत्य' की ओर ले जाने वाली प्रक्रिया है।

वेदांत दर्शन के अनुसार, शिक्षा का परम उद्देश्य आत्मसाक्षात्कार है। अद्वैत वेदांत के प्रवर्तक आदि शंकराचार्य के अनुसार, जीव और ब्रह्म का भेद मिथ्या हैकृज्ञान के माध्यम से यह अनुभूति होती है कि आत्मा और परमात्मा एक ही हैं। इस दृष्टि से शिक्षा केवल बाहरी ज्ञान नहीं, बल्कि आत्मज्ञान की साधना है। वेदांत के अनुसार, "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" अर्थात् जो ब्रह्म को जानता है, वह स्वयं ब्रह्मरूप हो जाता है।[11] यहाँ शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति में दिव्यता और आत्म–साक्षात्कार की चेतना का जागरण है। गुरु–शिष्य परंपरा इस दर्शन का व्यावहारिक रूप है। गुरु केवल सूचना देने वाला नहीं, बल्कि आत्मा के गूढ़ रहस्यों का प्रकाशक होता है। वेदांत में शिक्षा का केंद्र बाह्य ज्ञान नहीं, बल्कि अंतर्मन की शुद्धि और आत्मानुभूति है।

पतंजलि के योगसूत्र में शिक्षा का उद्देश्य मन की चंचलता का नियंत्रण और चित्त की शुद्धि बताया गया है। "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" (योगसूत्र 1.2) का अर्थ है– योग अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध। शिक्षा, योग की दृष्टि में, केवल बौद्धिक प्रशिक्षण नहीं है, बल्कि यह शरीर, मन और आत्मा के संतुलन की साधना है। योग दर्शन में शिक्षा का लक्ष्य आत्म–नियंत्रण, अनुशासन और ध्यान के माध्यम से व्यक्ति के समग्र विकास की प्राप्ति है। यहाँ शिक्षार्थी को एकाग्रता, संयम, सहनशीलता और आत्मनिष्ठा का अभ्यास कराया जाता है। आधुनिक शिक्षा में जब तनाव, प्रतियोगिता और असंतुलन बढ़ रहा है, तब योग दर्शन शिक्षा को मानसिक स्वास्थ्य और आंतरिक शांति की दिशा देता है।

गौतम बुद्ध के शिक्षा दर्शन में करुणा, प्रज्ञा (बुद्धि) और मध्यम मार्ग प्रमुख सिद्धांत हैं। बौद्ध दृष्टि में शिक्षा का उद्देश्य दुःख से मुक्ति और निर्वाण की प्राप्ति है। बुद्ध के अनुसार, अंधविश्वास या कठोर तप नहीं, बल्कि मध्यम मार्ग ही जीवन का सच्चा पथ है। इस दर्शन में शिक्षा का लक्ष्य है अज्ञान का निवारण, विवेक का विकास और करुणा की स्थापना। बौद्ध परंपरा में शिक्षक को 'आचार्य' नहीं, 'प्रकाशक' कहा गया है, जो मार्ग दिखाता है, परंतु चलना स्वयं शिष्य का कार्य है। बौद्ध शिक्षा में अनुभव, संवाद और आत्मनिरीक्षण को अत्यधिक महत्व दिया गया। नालंदा और तक्षशिला विश्वविद्यालयों में इस शिक्षा दर्शन का व्यावहारिक स्वरूप दिखाई देता है, जहाँ ज्ञान के साथ नैतिकता, तर्क और करुणा का संतुलन साधा गया था।[12] इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय दार्शनिक परंपरा में शिक्षा का स्वरूप केवल बौद्धिक प्रशिक्षण या कौशल विकास तक सीमित नहीं है। वेदांत आत्मसाक्षात्कार की दिशा देता है, योग दर्शन अनुशासन और एकाग्रता की, तथा बौद्ध दर्शन करुणा और मध्यम मार्ग की। इन तीनों में निहित है शिक्षा का समग्र दृष्टिकोण– जो व्यक्ति को ज्ञान, नैतिकता, अनुशासन और मानवता के आदर्शों से

जोड़ता है। इस समन्वित दार्शनिक दृष्टि से शिक्षा केवल सूचना का प्रसार न रहकर जीवन का रूपांतरण बन जाती है।

पश्चिमी दार्शनिक मतों का शिक्षा पर प्रभाव

पश्चिमी दर्शन ने शिक्षा की प्रकृति, उद्देश्य और विधियों पर गहरा प्रभाव डाला है। हेंडरसन के अनुसार, दर्शन शिक्षा को दिशा देता है और शिक्षा दर्शन को जीवन्तता प्रदान करती है।[13] जॉन डीवी का कहना है– "दर्शन शिक्षा का सामान्य सिद्धांत है, और शिक्षा दर्शन की प्रयोगशाला है।"[14] पश्चिमी आदर्शवाद, यथार्थवाद और प्रयोगवाद तीन प्रमुख दार्शनिक धाराएँ हैं जिन्होंने आधुनिक शिक्षा को नई दृष्टि दी। प्लेटो और हेगेल के आदर्शवादी दर्शन में शिक्षा का उद्देश्य चेतना के सर्वोच्च स्तर तक पहुँचना और आत्मा के विकास को साधना है। इसी परंपरा का भारतीय रूप विवेकानंद के कथन में मिलता हैकृ"शिक्षा वह नहीं जो मनुष्य में डाली जाए, बल्कि वह है जो उसमें पहले से विद्यमान है।[15] यथार्थवादी दृष्टिकोण में अरस्तू और जॉन लॉक ने शिक्षा को अनुभव–आधारित और वैज्ञानिक पद्धति से जोड़ते हुए कहा कि ज्ञान बाहरी जगत के संपर्क से प्राप्त होता है। लॉक इस विचार को बल देता है कि बालक का मन एक कोरे कागज़ की तरह है, जिस पर अनुभव की छाप शिक्षा के माध्यम से अंकित होती है। डीवी के प्रयोगवाद ने शिक्षा को जीवन से जोड़ा और कहा कि "शिक्षा जीवन की तैयारी नहीं, बल्कि स्वयं जीवन है"।[16] इस दृष्टिकोण में शिक्षा को समस्या–समाधान, अनुभव और सामाजिक प्रयोग का माध्यम माना गया।

इन पश्चिमी दार्शनिक प्रवृत्तियों का प्रभाव आधुनिक भारतीय शिक्षा विचारकों पर भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। महात्मा गांधी की नई तालीम में शिक्षा को सत्य, अहिंसा और स्वावलंबन पर आधारित किया गया। उन्होंने कहा कि "सच्ची शिक्षा वह है जो बालक के शरीर, मन और आत्मा को अभिव्यक्ति देती है"।[17] रवीन्द्रनाथ टैगोर ने मानवतावादी दृष्टिकोण से शिक्षा को अंतरराष्ट्रीय एकता और प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करने का माध्यम बताया।[18] श्री अरविंद घोष ने समग्र शिक्षा की संकल्पना प्रस्तुत की जिसमें भौतिक, मानसिक, प्राणिक और आध्यात्मिककृचारों स्तरों का विकास आवश्यक माना गया।[19] राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इन दार्शनिक दृष्टियों का समन्वय स्पष्ट रूप से दिखता है। इसमें समग्र मानव विकास (Holistic Human Development) की संकल्पना प्रस्तुत की गई है, जो व्यक्ति के संज्ञानात्मक, भावनात्मक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास पर बल देती है। वहीं UNESCO dh Education for Sustainable Development नीति में "वसुधैव कुटुम्बक" की भारतीय भावना की प्रतिध्वनि सुनाई देती है। अतः स्पष्ट है कि दर्शन के बिना शिक्षा दिशाहीन भटकाव है और शिक्षा के बिना दर्शन मात्र बौद्धिक व्यायाम। दोनों का समन्वय ही शिक्षा को जीवन, समाज और मानवता के समग्र उत्थान का माध्यम बनाता है।

शिक्षा का शास्त्रीय आधार

भारतीय संस्कृति में शिक्षा केवल ज्ञान का अर्जन नहीं, बल्कि जीवन का आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक संवर्धन है। शिक्षा के शास्त्रीय आधार वे तत्व हैं जो भारतीय परंपरा के वेद, उपनिषद, गीता, पुराण, स्मृति और अन्य दार्शनिक ग्रंथों में निहित हैं। इन शास्त्रों में शिक्षा को मानव जीवन के चार पुरुषार्थोंकृधर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से जोड़ा गया है। इस दृष्टि से शिक्षा का उद्देश्य केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व का निर्माण है। वेदों में ज्ञान को दिव्य शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। ऋग्वेद में कहा गया है– "विद्यया विन्दते अमृतम्" अर्थात् ज्ञान के माध्यम से अमरत्व की प्राप्ति होती है। यह शिक्षा के आध्यात्मिक उद्देश्य को स्पष्ट करता है। यजुर्वेद में शिक्षा को 'संस्कार' कहा गया है, जो मनुष्य को नैतिक और सामाजिक रूप से उत्तरदायी बनाती है। उपनिषदों में शिक्षा को आत्मा और ब्रह्म के ऐक्य की अनुभूति का साधन माना गया है। छांदोग्य उपनिषद का प्रसिद्ध वाक्य "तत्त्वमसि" इस दिशा में आत्मबोध और ज्ञान के सर्वोच्च लक्ष्य को इंगित करता है। इस प्रकार, शिक्षा को केवल बाह्य ज्ञान नहीं, बल्कि आत्म–साक्षात्कार का माध्यम माना गया।

भगवद्गीता में शिक्षा का स्वरूप कर्मयोग और ज्ञानयोग के रूप में प्रकट होता है। श्रीकृष्ण अर्जुन को शिक्षित करते हुए कहते हैं– "योगः कर्मसु कौशलम्" अर्थात् कर्म में कुशलता ही योग है। गीता शिक्षा को जीवन की कला और कर्म के माध्यम से आत्म–विकास का साधन बनाती है। शिक्षा यहाँ केवल सैद्धांतिक नहीं, बल्कि व्यवहारिक और क्रियाशील जीवन की प्रेरणा है।

भारतीय शिक्षा तंत्र का शास्त्रीय स्वरूप गुरुकुल परंपरा में मूर्त रूप से देखा जा सकता है। तैत्तिरीय उपनिषद में गुरु द्वारा दी जाने वाली दीक्षा "सत्यं वद, धर्मं चर"[20] शिक्षा के नैतिक और सामाजिक उद्देश्यों को स्पष्ट करती है। गुरुकुल में शिक्षा निरूशुल्क थी; शिष्य सेवा और समर्पण के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करता था तथा अंत में गुरु–दक्षिणा अर्पित करता था। यह प्रणाली केवल पाठ्य ज्ञान तक सीमित नहीं थी, बल्कि चरित्र, अनुशासन और

कर्तव्य की शिक्षा पर भी बल देती थी।

शास्त्रीय ग्रंथों में व्यावहारिक शिक्षा के अनेक उदाहरण मिलते हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में प्रशासन, अर्थनीति, राजनीति और कूटनीति की शिक्षा का विस्तृत वर्णन मिलता है। चिकित्सा क्षेत्र में चरक संहिता और सुश्रुत संहिता वैज्ञानिक चिकित्सा–शिक्षा के आदर्श माने गए हैं। इसी प्रकार, पाणिनि की अष्टाध्यायी भाषा–शिक्षण की वैज्ञानिक पद्धति का उत्कृष्ट उदाहरण है। इन ग्रंथों में शिक्षा का उद्देश्य केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक और सामाजिक जीवन में दक्षता का विकास भी था।

भारतीय परंपरा में कहा गया है– "विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्" अर्थात् शिक्षा विनम्रता लाती है, विनम्रता से पात्रता और पात्रता से सुख की प्राप्ति होती है। इस प्रकार शिक्षा को मानवता की प्रतिष्ठा का साधन माना गया। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इन प्राचीन सिद्धांतों को आधुनिक संदर्भों में पुनः प्रतिष्ठित करते हुए समग्र मानव विकास की अवधारणा प्रस्तुत की है। कहा जा सकता है कि भारतीय शिक्षा का शास्त्रीय आधार केवल ज्ञान–प्राप्ति नहीं, बल्कि आत्मविकास, नैतिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व और वैश्विक मानवता के संवर्धन की ओर उन्मुख है। यह शिक्षा को जीवन, समाज और सृष्टि के समन्वित विकास का माध्यम बनाता है।

शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार

विद्यार्थी के मानसिक विकास, अधिगम प्रक्रिया, प्रेरणा और व्यक्तित्व निर्माण से जुड़ा होता है, जो शिक्षा को वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करता है और अधिगम को व्यवस्थित, प्रभावशाली तथा अनुभव–आधारित बनाता है। यह दृष्टिकोण विद्यार्थियों को सक्रिय सहभागी बनाता है और सीखने के अनुभव को स्थायी एवं रचनात्मक बनाता है। आधुनिक मनोविज्ञान में मुख्य रूप से तीन सिद्धांत हैंकृव्यवहारवाद, संज्ञानवाद और निर्माणवाद। व्यवहारवाद, जिसे बी.एफ. स्किनर ने प्रतिपादित किया है, शिक्षा को बाहरी उत्तेजना और प्रतिक्रिया का परिणाम मानता है। इसके आधार पर शिक्षण विधियों को संरचित किया जाता है ताकि सकारात्मक प्रतिक्रिया प्राप्त हो सके और अधिगम प्रेरित हो।[21] संज्ञानवाद मस्तिष्क की सूचना–प्रसंस्करण की प्रक्रिया पर बल देता है। जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत में बालक के मानसिक विकास को चार अवस्थाओंकृसंवेदी–गतिक, पूर्व–संचालन, ठोस संचालन और औपचारिक संचालनकृमें विभाजित किया गया है, जहाँ यह माना जाता है कि शिक्षा बालक के सोचने, समझने और तर्क करने की प्राकृतिक प्रक्रिया का समर्थन करती है।[22] निर्माणवाद, जिसे लेव वायगोत्स्की के सामाजिक अंतर्क्रिया सिद्धांत ने समर्थन दिया है, में ज्ञान का निर्माण सामाजिक सहभागिता और अनुभव के आधार पर होता है। जेरोम ब्रूनर ने इसे 'स्पाइरल करिकुलम' के रूप में परिभाषित किया है, जिसमें पूर्वज्ञान के आधार पर ज्ञान को धीरे–धीरे और क्रमिक रूप से विकसित किया जाता है।[23] भारतीय परंपरा में भी मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण स्पष्ट हैं। पतंजलि के योगसूत्र में शिक्षा को चित्तवृत्तियों को नियंत्रित करने और समाधि के माध्यम से मानसिक अनुशासन प्राप्त करने का साधन माना गया है। जेड कृष्णमूर्ति ने आंतरिक स्वतंत्रता, जिज्ञासा और आत्म–निरीक्षण के माध्यम से व्यक्तित्व का विकास किया, जिससे व्यक्ति की अंतर्निहित क्षमता प्रकट होती है। वर्तमान में, भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इस मनोवैज्ञानिक आधार को प्रमुखता दी है। इसमें सोशल–इमोशनल लर्निंग, अनुभव–आधारित अधिगम, सक्रिय समस्या–समाधान, समालोचनात्मक सोच (Critical Thinking) जैसे दृष्टिकोण शामिल हैं। शिक्षक विद्यार्थियों की प्रेरणा, ध्यान, स्मृति और अधिगम की शैली का विश्लेषण कर शिक्षण को वैयक्तिकृत करता है, जिससे शिक्षा अधिक प्रभावी, सृजनात्मक और सम्पूर्ण रूप से विकासशील बनती है। इस प्रकार, शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार केवल सीखने की प्रक्रिया को वैज्ञानिक रूप से व्यवस्थित करने में सहायता नहीं करता, बल्कि विद्यार्थी को सक्रिय, रचनात्मक एवं आत्मनिर्भर बनाने का मार्ग भी दिखाता है। यह दृष्टिकोण शिक्षार्थी के समग्र व्यक्तित्व, मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक व्यवहार के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाता है और आधुनिक शिक्षाशास्त्र तथा नीति निर्धारण का आधार है।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा प्रणाली को समग्र दृष्टिकोण से पुनः संरचित करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। इस नीति में शिक्षा के तीन मूल आधारों दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक के संतुलित एकीकरण को प्राथमिकता दी गई है। दार्शनिक आधार शिक्षा को उद्देश्य, नैतिकता और मूल्य प्रदान करता है। यह दृष्टि विद्यार्थियों को केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उन्हें आत्मबोध, मानवता की सेवा और समाज के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण नागरिक बनने की दिशा में प्रेरित करती है। शास्त्रीय आधार भारतीय संस्कृति और परंपरा की गहराई में जाकर शिक्षा को आध्यात्मिक, नैतिक और व्यावहारिक आयाम प्रदान करता है। वेद, उपनिषद, गीता, पुराण और अन्य शास्त्रीय ग्रंथ शिक्षा के उद्देश्य, संस्कार और सामाजिक उत्तरदायित्व के सिद्धांतों को प्रतिपादित करते हैं, जिन्हें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने आधुनिक संदर्भ में प्रभावी रूप से प्रतिष्ठित किया है।

मनोवैज्ञानिक आधार शिक्षा को वैज्ञानिक और विद्यार्थी केंद्रित दृष्टि प्रदान करता है। यह अधिगम की प्रक्रियाओं, मानसिक विकास, प्रेरणा, ध्यान और स्मृति के अध्ययन पर आधारित है। व्यवहारवाद, संज्ञानवाद और निर्माणवाद जैसे मनोवैज्ञानिक सिद्धांत यह स्पष्ट करते हैं कि शिक्षा केवल सूचना का आदान–प्रदान नहीं, बल्कि ज्ञान, कौशल और व्यक्तित्व के समग्र विकास का माध्यम है। भारतीय परंपरा में भी योगसूत्र और कृष्णमूर्ति जैसे विचारकों ने शिक्षा को मानसिक अनुशासन, जिज्ञासा और स्वतंत्र सोच का साधन माना। इस शिक्षा नीति में सामाजिक–भावनात्मक शिक्षा (Social-Emotional Learning) अनुभव–आधारित अधिगम (experiential learning) और विवेचनात्मक सोच (बतपजपबंस जीपदापदह) को शामिल करके इस मनोवैज्ञानिक आधार को आधुनिक शैक्षिक संरचना में प्रभावी रूप से लागू किया गया है।

इस प्रकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा के दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक स्तंभों को एकीकृत करके विद्यार्थियों के समग्र विकास को सुनिश्चित करती है। यह नीति केवल ज्ञान और कौशल तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, नैतिक मूल्यों, रचनात्मकता और आत्मबोध की दिशा में भी शिक्षा को मार्गदर्शित करती है। नीति का समग्र दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा का अंतिम उद्देश्य केवल रोजगार या परीक्षा सफलता नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज के संपूर्ण विकास में योगदान देना है।

अतः कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 न केवल भारतीय शिक्षा प्रणाली का एक अभिनव रूप प्रस्तुत करती है, बल्कि यह यह सुनिश्चित करती है कि शिक्षा के दार्शनिक, शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक तत्व संतुलित रूप में विद्यार्थियों के जीवन, समाज और राष्ट्र के विकास में योगदान दें। यह समग्र दृष्टिकोण शिक्षा को एक सशक्त, मूल्य आधारित और भविष्योन्मुखी प्रक्रिया बनाता है, जो आधुनिक युग की तकनीकी और सामाजिक चुनौतियों का सामना करने में सक्षम नागरिक तैयार करता है।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ सूची

1. गांधी, महात्मा (1953). बुनियादी शिक्षा. इलाहाबाद नवजीवन मंडल.
2. गांधी, महात्मा (1958). नई तालीम की ओर. अहमदाबाद नवजीवन प्रकाशन मंदिर.
3. बधेका, गिज्जुभाई (1999). मॉंटेसरी पद्धति. बीकानेर बागदेवी प्रकाशन., पृ. 112
4. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली (2008). शिक्षा और संस्कृति. दिल्ली राजकमल प्रकाशन. पृ. 67
5. वैदिक हेरिटेज पोर्टल (2014). उपनिषदरू वैदिक धरोहर. नई दिल्ली भारत सरकार, संस्कृति मंत्रालय. पृ. 89
6. वाइगोत्स्की, लेव (1978). माइंड इन सोसाइटीरू द डेवलपमेंट ऑफ हायर साइकोलॉजिकल प्रोसेसेज. कैम्ब्रिज, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. पृ. 57
7. पियाजे, जीन (1952). द ओरिजिन्स ऑफ इंटेलिजेंस इन चिल्ड्रन. न्यूयॉर्क, नॉर्टन एंड कंपनी. पृ. 234
8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली, भारत सरकार. पृ. 4
9. वही, पृ. 5
10. शर्मा, प्रो सारिका, डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के शैक्षिक विचारों की प्रासंगिकता, पृष्ठ 114. ।भारतीय शिक्षाशास्त्री श्रृंखला–5,डॉक्टर राधाकृष्णन् सर्वपल्ली, केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा ,सं– प्रोफेसर नन्द किशोर पांडेय।
11. शंकराचार्य (1998). उपनिषद भाष्य. वाराणसी, चौखंभा विद्याभवन. शंकराचार्य, पृ. 145
12. राहुल सांकृत्यायन (1956). बौद्ध दर्शन. इलाहाबाद, किताब महल., पृ. 178दृ182
13. हेंडरसन, केविन (2019). फिलॉसफी ऑफ एजुकेशन, मेजर थीम्स इन द एनालिटिक ट्रेडिशन. लंदनरू रूटलेज. पृ. 87दृ 89)
14. डीवी, जॉन (1916). डेमोक्रेसी एंड एजुकेशन. न्यूयॉर्क, मैकमिलन. डीवी, पृ. 328

15. विवकानंद, स्वामी (2006). स्वामी विवेकानंद के शिक्षा संबंधी विचार. कलकत्ता, अद्वैत आश्रम., पृ. 342
16. डीवी, जॉन (1916). डेमोक्रेसी एंड एजुकेशन. न्यूयॉर्क, मैकमिलन. पृ. 54
17. गांधी, महात्मा (1953). हिंद स्वराज. अहमदाबाद, नवजीवन प्रकाशन मंदिर. पृ. 156
18. टैगोर, रवीन्द्रनाथ (1931). द रिलिजन ऑफ मैन. लंदन एलेन एंड अनविन. पृ. 67–69
19. घोष, अरविंद (1998). द ऑन एजुकेशन. पांडिचेरी श्री अरविंद आश्रम. पृ. 289–295
20. तैत्तिरीय उपनिषद्, शिक्षावल्ली, अनुवाक 11, मंत्र 1
21. Skinner, B. F. 1953, Science and Human Behavior, Free Press, 78.
22. Piaget, J. 1950, The Psychology of Intelligence, Routledge, 85.
23. Bruner, J. S. 1960, The Process of Education, Harvard University Press, 37.
24. डॉ. सीमा शर्मा, सह आचार्य (हिंदी) एवं अध्यक्ष भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ।

Cite this Article

'डॉ. सीमा शर्मा', "दार्शनिक चिंतन, शास्त्रीय विरासत और मनोविज्ञान का समग्र दृष्टिकोण राष्ट्रीयः शिक्षा नीति 2020", Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal, ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:3, Issue:4, April 2026.

Journal URL- https://www.researchvidyapith.com/

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."